International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(5): 07-09

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(5): 07-09
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 03-07-2016
Accepted: 04-08-2016

**ज्योति बाला**
शोधच्छात्रा, पी०एच०डी०
संस्कृत विभाग जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

**Correspondence**
**ज्योति बाला**
शोधच्छात्रा, पी०एच०डी०
संस्कृत विभाग जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

# कालिदास के नाटकों में नृत्यकला

## ज्योति बाला

**सारांश**
कलाएँ प्रत्येक काल एवं युगों में मानव जीवन के लिए उपयोगी एवं मानव की सदैव सहयोगी रही हैं । संस्कृत शास्त्रों में वर्णित कलाओं में से यद्यपि वर्तमान भौतिकवाद के युग में कई कलाओं का प्रयोग गौण अथवा लुप्तप्राय हो चुका है तथापि 'कला जीवन के लिए है एवं जीवन कला के लिए है' इस उक्ति के अनुसार वर्तमान काल में भी कलाएँ मानव जीवन की अभिन्न सहचरी बनी हुई है। चौंसठ कलाओं में नृत्यकला का स्थान अन्यतम है। नृत्यकला में आंगिक, वाचिक, सात्त्विक एवं आहार्य इन चार अभिनयाङ्गों की विशेष भूमिका होती है। नृत्य के भाव की प्रधानता होने के कारण इस कला को श्रेष्ठ कलाओं में गिना जाता है। 'अन्यद्भावाश्रयं नृत्यम्'।
कालिदास के नाटकों में समस्त कलाओं का निदर्शन होता है। तत्रापि विशेषतः नृत्यकला। 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' तो इस कला के लिए जगत्प्रसिद्ध है। प्रस्तुत शोध पत्र में कालिदास के तीनों नाटकों में वर्णित 'नृत्यकला' पर सविस्तार विचार किया गया है।

**कूट शब्दः** नृत्यकला, भावभङ्गिमा, भ्रूविलास, नाट्यशास्त्र, अभिनय

नृत्य सम्बन्धी सामग्री उपलब्ध कराने वाला सबसे अच्छा तथा सर्वप्रथम स्रोत है 'नाट्यशास्त्र'। रंगमच की सजावट, व श्रृंगार, सभागार, नृत्य से पहले पूजा आदि को नाट्यशास्त्र में समझाया गया है। इस कला से सम्बन्धित कुछ अन्य ग्रन्थ भी हैं – यथा धनञ्जय का दशरूपक, नन्दीकेश्वर का अभिनयदर्पण, भावप्रकाश, रामचन्द्र तथा गुणचन्द का नाट्यदर्पण सिंहभूपाल का रसार्णव सुधाकर आदि। भारतीय शास्त्रीय नृत्य हार्दिक भावनाओं एवं भावनाओं की अभिव्यक्ति है। इस कला के लिए कौशल, उत्कृष्ट शिक्षक तथा इस कला के प्रति कलाकार की हार्दिक समर्पण की आवश्यकता होती है। इसके साथ ही नृत्य में पूरे शरीर के हाव–भावों की आवश्यकता होती है।
नृत्य कला के लिए व्यापक तकनीक ज्ञान भी होना चाहिए। इस कला में चार प्रकार का अभिनय होता है आहार्य (āhāryaa), सात्त्विक (Sattvik), वाचिक (Vācik) तथा आंगिक (āngika)। जो अभिनय उपयुक्त पोशाक के साथ किया जाता है उसे आहार्य अभिनय के नाम से जाना जाता है, जबकि वाचिक एवं आंगिक अभिनय में कार्यवाहक शरीर एवं उसके कतिपय भागों की मदद से बातचीत के साथ अभिनय किया जाता है। शास्त्रीय नृत्य में माथे की भौंहों हेतु छोटी उंगली से हाव–भाव के रूप में चिन्हित किया जाता है तथा अपनी सुन्दरता के लिए माना जाता है। इस कला में अपने शरीर का पूरा ध्यान तथा नियन्त्रण की पूरी आवश्यकता होती है। अलग–अलग मुद्रायें अलग अर्थ का संकेत देती हैं।
भंगिमा या शरीर के हाव–भाव में तेरह प्रकार के सिर, आँखों के छत्तीस प्रकार, गर्दन के नौ, हाथों की सैंतीस, शरीर के दस एवं 108 करण या मुद्रायें नृत्य के लिए वर्णित की गई हैं।
मालविकाग्निमित्र में 'छलित' नामक नृत्य का वर्णन हुआ है जिसने नाटक के घटनाक्रम को आगे बढ़ाने में सशक्त भूमिका का निर्वाह किया है। नाटक की नायिका इस नृत्य की शिक्षा ग्रहण कर वसन्तोत्सव पर इसका अभिनय प्रस्तुत करती है, जिसका आधार बनती है शर्मिष्ठा द्वारा प्रवर्तित चतुष्पादोत्थ छलिक नृत्य को लोग कहते है, उसी में किसी एक विषय पर दोनों के प्रयोग देखें जायें। इसी से अन्तर का पता चल जायेगा।[i] द्वितीय अंक में जब आचार्य गणदास यह घोषणा करते हैं कि शर्मिष्ठा द्वारा प्रकाशित मध्यलय समन्वित चतुष्पदा गान है, उसी में छलित नृत्याभिनय से चमकृत गान होगा।[ii] 'मालविकाग्निमित्र' के आधार पर 'छलित' एक प्रकार का नृत्य गीत भी है। कालिदास ने स्वयं इसे शर्मिष्ठा की कृति माना है। इसमें नृत्य एवं गीत दोनों का विधान बताया गया है। इसी अंक में राजा मालविका के नृत्य की प्रशंसा में कहते हैं कि इसकी बड़ी–बड़ी आँखों वाला शरद ऋतु के

चन्द्रमा की शोभा से युक्त मुख, स्कन्ध देश मत बाहुयुग से शोभाशाली, स्तनमण्डल के पीनोन्नत होने पर भी वक्षःस्थल संकुचित, पार्श्व परिमार्जितप्राय, कटि भाग, मुष्टिमेय परन्तु ऊरुयुगल विशाल, चरण लम्बी अङ्गुलियों वाला है, मालुम पड़ता है नृत्य उपदेश के अभिप्राय को लक्ष्य में रखकर ही इसे साज–सज्जा दी गई है।[iii]

आचार्य गणदास ने मालविका को पाँचों अङ्गों का अभिनय सिखाया था।[iv] मालविका द्वारा गीत के साथ–साथ उसके भाव के अनुरूप अभिनय किया जाना भी नृत्यकला में उसकी परम प्रवीणता का परिचायक है। नृत्य में जो गुण अपेक्षि हैं वह सब मालविका के नृत्य में थे। यथा – परिव्राजिका – मैंने जो देखा है, सब निर्दोष है कारण अङ्गों द्वारा गेयार्थ इतनी सफाई से प्रकटित किया गया है कि मालूम पड़ता था अङ्ग बोल रहे हों, चरणन्यास लय का अनुगामी बना रहा। अभिनय में रस की तन्मयता बनी रही। हाथों द्वारा दिया गया ताल अभिनय की कोमलता बढ़ाता रहा। उसके अनेक प्रकार एक दूसरे की मदद करते रहे, सर्वत्र समान राग बंधा रहा।[v] मालविका द्वारा किये गये नृत्य की प्रंशसा से आचार्य गणदास स्वयं को कृत, कृत्य मानते हैं तथा कहते हैं कि आज मैं नर्तक बना।[vi]

नाटक में इस बात का स्पष्ट संकेत है कि नाट्याभिनय अनेक उत्सवों एवं अवसरों पर किया जाता होगा तथा जनसामान्य इसका भरपूर रसास्वादन करता होगा।[vii] नाट्यशाला में ही नृत्यादि का आयोजन किया जाता था। कविकुलगुरु कालिदास के द्वितीय नाटक 'विक्रमोर्वशीयम्' में यद्यपि मनुष्य द्वारा नृत्य किये जाने को कोई भी संकेत नहीं है तथापि पशु पक्षियों सहित वृक्षों एवं लताओं द्वारा नृत्य किये जाने का हृदयग्राही वर्णन अवश्य हुआ है। दक्षिण वायु द्वारा कुन्द लता का मदमस्त होकर झूमना भी नृत्य का परिचायक है। यथा –

**"निषि०चन् माधवी लक्ष्मी लता कौन्दी च लासयन् स्नेह – दाक्षिण्ययोर्योगात् कामीव प्रतिभाति मे।"**[viii]

अर्थात् यह दक्षिण वायु वसन्त की शोभा को बढ़ाता हुआ तथा कुन्दलता को नचाता हुआ प्रेम एवं चतुरता के योग से कामी मनुष्य की तरह प्रतीत हो रहा है जैसे कोई कामी पुरुष एक नायिका के साथ गर्भाधान करता है तथा दूसरी के साथ चतुरता का व्यवहार कर रहा है। उसी प्रकार वायु वासन्ती शोभा को प्रेम से बढ़ा रहा है, तथा कुन्दलता को नचा रहा है। इस श्लोक में कवि द्वारा दक्षिण वायु द्वारा कुन्दलता का नचाना, नृत्य कला का ही उदाहरण है।

प्रस्तुत नाटक में मोर द्वारा नृत्य किये जाने का भी उल्लेख हुआ है। राजा उर्वशी के विरह से दुःखी होकर कहता है कि तेज, हवा के झोकों से ताडित होता हुआ यह मोर गर्दन को ऊपर उठाये हुए केका वाणी से परिपूर्ण होकर बादलों को देख रहा है तथा मेरे वचनों का उत्तर न देकर इसने नाचना आरम्भ कर दिया है।[ix]

इसी प्रकार कवि ने समुद्र द्वारा नृत्य किये जाना का भी वर्णन किया है तथा कवि की यह कल्पना निस्सन्देह अनुपम एवं अद्वितीय है। कवि का कथन है कि जहाँ जल में प्रतिबिम्बित मेघों की परछाई उसका शरीर है, वायु द्वारा ऊपर उठाई गई लहरें नृत्य के लिए उठाये गये हाथ हैं। शंख एवं हंसादि पक्षी पैर के घुंघरु एवं आभूषण हैं, हाथियों तथा मकरों के झुण्ड नीले वस्त्र है, नीलकमल हार हैं तथा तट से टकराती हुई लहरें ताल दे रही हैं।[x] कल्प वृक्ष के नृत्य में प्रकृति द्वारा प्रदत्त संगीत दर्शनीय है। कल्प तरु मनोहर विविध प्रकार के नृत्य कर रहा है, पुष्प गन्ध से बौराये भ्रमर गीत गा रहे हैं, कोयलें बोल रही हैं – बाजे बज रहे हैं तथा हवा में उसके पत्ते चल रहे है मानो उसके हाथ–पैर चल रहे हों अर्थात् नृत्य कर रहें हैं।[xi] वसन्तिका राग के साथ–साथ हाथी द्वारा नृत्य किये जाने का भी उल्लेख मिलता है।

इस प्रकार यद्यपि मनुष्यों द्वारा नृत्य प्रस्तुत किये जाने का कोई भी संकेत नाटक में नहीं मिलता है, परन्तु कवि ने अपनी कल्पना से पशु–पक्षियों, लताओं एवं समुद्र द्वारा नृत्य करने का विभिन्न प्रसंगों में स्पष्ट किया है। इससे सुस्पष्ट होता है कि नृत्य कला से प्रायः सभी लोग सुपरीचित थे।

नृत्य कला के विवेचन के अन्तर्गत महाकवि कालिदास प्रणीत ''अभिज्ञानशाकुन्तल'' नाटक में भी इस कला का उल्लेख मिलता है। संगीत विद्या में ही नृत्य कला का सन्निवेश हुआ है फिर भी कवि ने इस कला का पृथक निर्देश किया है।

विश्वामित्र का तप भङ्ग करने के लिए मेनका द्वारा की गई अनेक प्रकार की भावभङ्गिमाएँ, भ्रूविलास, अङ्गप्रदर्शन, अभिनय, समस्त क्रिया कलाप नृत्य के अन्तर्गत आते हैं। षष्ठ अंक में सानुमती अप्सरा कहती है कि दीपक के रहने पर भी व्यवधान दोष से ही यह राजर्षि अन्धकार की बुराई का अनुभव कर रहा है। मैं इसे अभी प्रसन्न करती हूँ अथवा शकुन्तला को ढ़ाढ़स बँधाती हुई इन्द्र की माता के मुख से मैंने यह सुना था कि यज्ञ भाग के लिए उत्सुक देवता ही वैसा ढंग करेंगे जिससे शीघ्र ही पति अपनी धर्मपत्नी का अभिनन्दन करेगा। इसलिए समय की प्रतीक्षा करना उचित है। तब तक मैं इस समाचार से प्रिय सखि को ढ़ाढ़स बंधाति हूँ। वह नृत्य के साथ प्रस्थान करती है। इस प्रकार सानुमती उदभ्रान्तक नृत्य करती हुई आकाश में चली जाती है।[xii]

उपरोक्त विवरण से स्प्ष्ट है कि कालिदास ने अपने तीनों नाटकों में नृत्यकला को भी अन्य कलाओं की भाँति यथोचित स्थान दिया है जिससे उनकी कलाप्रियता एवं कलाओं की जीवन में महत्ता स्वयमेव उदघाटित होती है।

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची


1. **अभिज्ञानशाकुन्तलम्** –कालिदास, व्याख्याकार सुधाकर मालवीय, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, द्वितीय संस्करण, वि० सं० 2021
2. **मालविकाग्निमित्रम्** – कालिदास, व्याख्याकार पं० रामचन्द्र, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी
3. **विक्रमोर्वशीयम्** – कालिदास, व्याख्याकार पं० विन्ध्येश्वरी प्रसाद मिश्र, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी


## पादटिप्पणियाँ

1. देव, शर्मिष्ठायाः कृतिं चतुष्पादोत्थं .....तत्रैकार्थसंश्रयमुमयोः प्रयोगं पश्यामः। तावता ज्ञायत एवात्रभवतोरूपदे शान्तरम्। मालविकाग्निमित्र, अंक–1, पृष्ठ 49
2. शर्मिष्ठायाः कृतिर्लयमध्य ..... छलिक प्रयोगमेकमनाः श्रोतुमर्हति देवः। मालविकाग्निमित्र, अंक–2, पृष्ठ 56
3. दीर्घाक्षं शरदिन्दुकान्ति वदनं बाहू नतावंसयोः संक्षिप्त निबिडोन्नतस्तनमुरः पार्श्वे प्रभृष्टे इव। मध्यः पाणिमितो नितम्वि जद्यनं पादावरालाङ्गुली छन्दो नर्तयितुर्यथैव मनसि श्रिृष्टं तथास्या वपुः।। मालविकाग्निमित्र, अंक–2, श्लोक–3
4. इदानीमेव प०चाङ्गादिकमभिनयमुपदिश्य। मालविकाग्निमित्र, अंक–1, पृष्ठ 21
5. अङ्गैरन्तर्निहितवचनैः सूचितः सम्यमर्थः पादन्यासो लयमनुगतस्तन्मयत्व रसेषु। शाखायोनिर्मृदुरभिनयस्तद्विकल्पानुवृत्तौ भावो भावं नुदति बिषयाद्रागबन्धः स एव।। मालविकाग्निमित्र, अंक–2, श्लोक–8
6. अद्य नर्तयितास्मि। मालविकाग्निमित्र, अंक–2, पृष्ठ–69
7. तेन हि द्वावपि वर्गो प्रेक्षागृहे संगीतरचनां कृत्वा तत्रभवो दूतं प्रेषयतम्। मालविकाग्निमित्र, अंक–1, पृष्ठ 49
8. विक्रमोर्वशीयम्, अंक–2, श्लोक–4
9. आलोकयति पयोदानं प्रबल–पुरोवात–ताडित–शिखण्डः।

केकागर्भेण शिखी दूरोन्नमितेन कण्ठेन कथमवत्वा प्रतिवचनं नार्तितु प्रवृतः।। विक्रमोर्वशीयम्, अंक–4, श्लोक–8, पृष्ठ 135

10. पूर्व दिक्पवनाहतकलृलोद्वबाहुमेघाङ्गैर्नृत्यति संतुलित जलनिधि नाथः।हंस स्थाऽगशङ्खकुङ्कुमकृताभरणः करिमकराकुलकृष्ण कमलकृतावरण वेला सलिलोद्वेलिलदतहस्ततालोऽवस्तृषति दशदिशो रुद्घ्वानवमेघकालः।।
11. गन्धोन्मादितमधकरगीतेर्वाधमासैः परभृततूर्यैः। पसृतपवनो द्वोल्लितावल्लवनिकराः सुललितविध पुकारैनृत्यति कल्पतरु।। विक्रमोर्वशीयम्, अंक–4
12. सति खलु दीपे व्यवधानदोषेणेषोऽन्धकारदेषमनुभवति ..... इत्युद्भ्रान्तेकेन निन्कान्ता। अभिज्ञानशाकुन्तल, अंक–6, पृष्ठ–239